© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 2 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

रस सिद्धान्त एवं उसके अनुप्रयोग : अभिज्ञानशाकुन्तलम् के परिप्रेक्ष्य में

साधना देवी
शोधच्छात्रा
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद।

प्रस्तावना

रस का इतिहस उतना ही पुराना है जितना की यह सृष्टि। 'जागच्चित्र' का निर्माता शिव स्वयं आनन्द–रसमय हैं। रस के वशीभूत होकर ही वे सर्जना के गुरुतर कार्य में लगे हुए हैं। अतएव उनकी कोई भी रचना रस विहीन नहीं हो सकती। सम्पूर्ण प्राणिजात जन्मना रसाभिमुख रहा है। मानवेतर प्राणियों में भी सुख दुःख की अनुभूति देखी जाती है। निरन्तर विकास एवं परिवर्तन के अटूट मार्ग पर अग्रसर मानव जाति में इसकी अजस्र धारा का प्रवाहित होना तो परम स्वाभाविक है। रस सिद्धानत भारतीय चिन्तन की लगभग दो सहस्त्र वर्षों की सतत साधना की महान् उपलब्धि है और इसकी विवेचना का प्रथम प्रयास देखा जाता है। भारतमुनि के नाट्यशास्त्र में। भरत के पूर्व या उनके बाद भी रस–विवेचन की परम्परा रही है, इस बात को अस्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि भरत के पूर्व भी वेदों तथा उपनिषदों में रस की चर्चा मिलती है तथा भरतमुनि के परवर्ती आचार्यों ने भी रस की विवेचन बहुत ही मार्मिक रूप में किया है। बृहदारण्यक उपनिषद् में रस को वस्तु तत्त्व के रूप में स्वीकार किया गया है– **प्राणो व आङ्गानां रसः**'[प] तैत्तिरीयोनिषद् में कहा गया है– **'रसो वै सः**'[पप] छान्दोग्योपनिषद् में कहा गया है– **एषां भूतानां पृथ्वी रसः.....................साम उद्गीथो रसः**'[पपप]

भारतीय काव्यों में रस का विवेचन अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण विषय है, विशेषतः नाट्य ग्रंथों में। विविध भारतीय नाटककारों ने रस को ही अपने ग्रंथ का आधार–स्तम्भ भी बनाया। भवभूति का उत्तरामचरित नाटक इसका जीता जागता उदाहरण है। भवभूति ने अपने इस नाटक में जिस करुण रस की अभिव्यक्ति की है वह अत्यन्त ही मर्मस्पर्शी और कारुणिक है। उन्होंने अपने इस ग्रंथ में करुण रस को दर्शाने के लिए पत्थर को भी रूला देने में समर्थता दिखाई है। भगवान राम के अन्तर्व्यथा को करुण रस के माध्यम से ही अभिव्यक्त किया गया है– 'अपि ग्रावा रोदित्यपि दलति उज्रस्य हृदयम्'[पअ] इस तरह क्रौंच पक्षी के कारुणिक दशा का भी बहुत ही मार्मिक रूप से अभिव्यक्ति किया गया है–

मा! निषाद् प्रतिष्ठाम् त्वमगमा शास्वतिसमाः।
यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काम मोहितम्।।[अ]

इसीलिए उत्तररामचरित में एक ही रस की प्रधानता को स्वीकार भी किया गया है– **एको रसः करुण एवं**[अप] इसी प्रकार महाकवि कालिदास ने भी अपने नाट्य ग्रंथों में रस का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है। अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक में उन्होंने रस की जो अभिव्यक्ति प्रस्तुत की है वह दर्शकों के हृदय को रूला देता है। अभिज्ञानशाकुन्तल में आश्रम से लेकर दुष्यन्त के राजमहल तक नाट्य–शास्त्रियों द्वारा स्वीकृत प्रमुख रसों का पुट देखने को मिलता है, शृङ्गार रस से लेकर वात्सल्य रस का हृदयङ्गम दृश्य दिखाई देता है। इसके अतिरिक्त भी कई नाटककारों ने अपने नाटकों में रस की जो अनुभूति कराई है, वह अत्यन्त ही हृदयग्राही है।

रस का स्वरूपः

काव्यशास्त्र या नाट्यशास्त्र में रस का अपना विशेष महत्त्व है। भरतमुनि से लेकर भट्टलोल्लट, श्रीशङ्कुक, भट्टनायक, अभिनवगुप्त तथा परवर्ती आचार्यों को रस की अनुभूति भिन्न–भिन्न रूप में हुई है। किसी को रस **आनन्द–रूप** है, यह मान्य है तो किसी को **रस दुःख रूप** है, किसी को **रस सुख रूप** है तो किसी को **सुखदःखोभय** रूप स्वीकार है।

रस आनन्द–रूप है– भरत–सूत्र के व्याख्याता आचार्यों के विवेचन के फलस्वरूप रस का स्वरूप क्रमशः विषयगत होता गया और वह 'आस्वाद' बन गया। इस अर्थ–परिवर्तन का सर्वाधिक दायित्व अभिनवगुप्त पर है। अभिनवगुप्त शैवाद्वैतवाद के प्रसिद्ध आचार्य थे। अतः उन्होंने अपनी दार्शनिक मेधा के द्वारा रस विवेचन को भी शैवाद्वैत सिद्धान्त के रंग में रंग दिया। उनके अनुसार रस का अर्थ है–**आनन्द। और आनन्द विषयगत न होकर** आत्मगत ही होता है। विषय तो आत्म–परामर्श या आत्मास्वाद का माध्यम मात्र है जिसके द्वारा प्रमाता संविद्–विश्रान्ति लाभ करता है। अतः रस नाट्यगत नहीं हो सकता। नाट्य तो संविद्–विश्रान्ति रूप रस का माध्यम मात्र ही हो सकता है।

अभिनवगुप्त की व्याख्यान–शैली में अर्थगरिमा के साथ शब्दाडम्बर का भी विचित्र संयोग है। लोक सामान्य के प्रतिनिधि प्रधान पात्र की चित्तवृत्ति से तादात्म्य स्थापित करता हुआ, निर्विध्न अर्थात् देश–काल की सीमा से मुक्त संविद्विश्रान्ति रूप में रमणीय होने के कारण रस बन जाता है। उदाहरण के लिए कुशल नट–नटी दुष्यन्त–शकुन्तला के रूप में हमारे सम्मुख उपस्थित होते हैं। जो तपोवन की रमणीय कुंजों में सर्वप्रथम मिलते हैं **(1) विभाव**–दोनों एक–दूसरे के आह्लादकारी सौन्दर्य को देखकर चकित हो जाते हैं और तृषित उत्सुक नेत्रों से एक–दूसरे की ओर देखते हैं– अनिच्छा पूर्वक जाती हुई शकुन्तला चोरी–चोरी दुष्यन्त पर दृष्टिपात करती है **(2) अनुभव–**वियोग में कभी उत्कण्ठा और कभी निराशा में व्यग्र होकर वे एक–दूसरे से मिलने के लिए आतुर हो उठते हैं **(3) (यभिचारीभाव–**सौभाग्य से शकुन्तला सखी की सहायता से पत्र द्वारा दुष्यन्त पर अपना प्रेम प्रकट करने का अवसर प्राप्त करती है। इतने में ही दुष्यन्त वहाँ आकर सहसा उपस्थित हो जाते हैं और इस प्रकार दोनों प्रेमियों का संयोग हो जाता है। जब यह सब (विभाव, अनुभाव) और व्यभिचारी आदि का प्रपंच) काव्य, संगीत रंग–वैभव आदि की सहायता से मंच पर प्रदर्शित किये जाते हैं तो प्रेक्षक के चित्त में वासना रूप में स्थित रति स्थायीभाव जाग्रत होकर उस चरम सीमा तक उद्दीप्त हो जाता है जहाँ प्रेक्षक वीतविध्न होकर अर्थात् व्यक्ति, देश–काल आदि का अन्तर भूलकर प्रस्तुत प्रसंग के साथ तन्मय

हो जाने से आत्मविश्रान्तिमयी आनन्द चेतना में लीन हो जाता है– यही आनन्द चेतन रस है। इस प्रकार अभिनवगुप्त के अनुसार–नाट्यादि के सेवन से भाव की भूमिका में आत्मविश्रान्तिमयी आनन्द चेतना ही रस है।

रस सुख रूप है–

विभावेनानुभावेन व्यक्तः संचारिणा तथा
रसतामेति रत्यादिः स्थायीभावः सचेतसाम्।[अपप]

रसवादी कुछ आचार्यों ने काव्य या नाट्य में सुखद रसानुभूति को ही रस स्वीकार किया है।

रस दुःख रूप है–

रसवादी कुछ आचार्यों ने काव्य या नाट्य में दुःखद रसानुभूति को ही रस स्वीकार किया है।

रस सुख दुःखोभय रूप है–

रसवादी कुछ आचार्यों ने काव्य या नाट्य में रस सुख 'दुःखोभय रूप अनुभूति को ही रस माना है।

2 रस निष्पत्तिः

नाट्यशास्त्र के प्रणेता आचार्य भरतमुनि माने जाते हैं। यद्यपि भारतीय इतिहास में भरत नाम के अनेक व्यक्तियों का संज्ञान मिलता हैं परन्तु वे भरत राजा के नाम से प्रसिद्ध है न कि भरतमुनि के नाम से। अतः नाट्यशास्त्र के प्रणेता आचार्य भरतमुनि को ही मानना युक्तिसंगत होगा। आचार्य भरत ने नाट्य का जो स्वरूप दिया है उसकी व्याख्या के पूर्व यह जान लेना आवश्यक है कि यह रस नाट्य रस है। नाट्यगत प्रत्येक वस्तु रसानुगत होती है। उनके कथन– नहि रसादृते कश्चिदर्थः प्रवर्तते– का यही अभिप्राय है। विभव, अनुभाव तथा व्यभिचारी भावों का (रत्यादि स्थायी भावों से) संयोग होने पर रस की निष्पत्ति होती है। आचार्य भरत ने मूलतः रस के स्वरूप का नहीं बल्कि रस की निष्पत्ति का ही विवेचन किया है। इस सन्दर्भ में उनका कथन है कि–' *विभावानुभावव्यभिचारीसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः।*[अपपप] अर्थात् विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी भावों के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है। आचार्य भरत के रस सिद्धान्त की व्याख्याकारों के सिद्धान्तों का निरूपण क्रमशः निम्न रूप से द्रष्टव्य है–

2.1 भट्टलोल्लट–रसोत्पत्तिवादः

विभावानुभावव्यभिचारीसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः इस सूत्र के व्याख्याकारों में भट्टलोल्लट प्रथम हैं उनकी व्याख्या में रस का अर्थ है– नायक–नायिका को अनुभूत होने वाला रत्यादि स्थायी भाव। और निष्पत्ति का अर्थ है उत्पत्ति–*विभावादिभिः संयोगोऽर्थात् स्थायिनस्ततो रसनिष्पत्तिः।*[पग] अर्थात् विभाव आदि। (अनुभाव तथा संचारीभावों) से संयोग अर्थात् स्थायी (भाव का संयोग होने पर) का उससे रस की निष्पत्ति होती है। इसीलिए इनके इस मत को 'रसोत्पत्तिवाद' कहा जाता है। आचार्य भट्टलोल्लट के इस सिद्धान्त का श्रीशङ्कुक ने तर्क पूर्वक खण्डन प्रस्तुत किया है। श्रीशङ्कुक ने भट्टलोल्लट के रस विषयक लक्षण में आठ दोष का प्रदर्शन करने के उपरान्त अपनी रस विषयक व्याख्या प्रस्तुत करते हैं, किन्तु यहाँ पर उनके खण्डन की चर्चा विषय की वृहदता के भय से नहीं किया जा रहा है, केवल उनके मतानुसार रसोत्पत्ति का ही उल्लेख अग्रिम पंक्तियों में किया जा रहा है।

2.2 श्रीशङ्कुक–अनुमितिवाद

रस सूत्र के द्वितीय व्याख्याकार आचार्य शङ्कुक के मतानुसार विभाव आदि के द्वारा अनुमाप्य अनुमापक रूप सम्बन्ध से स्थायी रूप रस की नट में अनुमिति (निष्पत्ति) होती है– *तस्माद्वेतुभिर्विभावाख्यैः कार्यैश्चानुभावात्मभिः सहचारिरुपैश्च व्यभिचारिभिः प्रयत्नार्जिततया कृत्रिमैरपि तथानभिमन्यमानैरनु कर्तृस्थत्वेन लिङ्गबलतः प्रतीयमानः स्थायीभावो मुख्यरामादिगतस्थाय्यनु– करणरूपः। अनुकरणरूपत्वादेव च नामान्तरेण व्यपदिष्टो रसः।*[ग]

2.3 भट्टनायकः साधारणीकरण

रस सूत्र के व्याख्याकारों में तृतीय मत भट्टनायक का है। इनका मत है कि –न तो तटस्थ अर्थात् उदासीन (नट तथा नायक) के सम्बन्ध से और न ही आत्मगत रूप से (सामाजिक में) रस की प्रतीति होती है, न उत्पत्ति होती है, न अभिव्यक्ति होती है; अपितु काव्य तथा नाटक में अभिधा से भिन्न एक भावकत्व नामक व्यापार होता है जिसका स्वरूप विभावादि का साधारणीकरण करना है– *''विभावादि साधारणीकरणमेव आत्मा स्वरूपं यस्य तेन'*[गप] भट्टलोल्लट, श्रीशङ्कुक तथा अभिनवगुप्त के रस सिद्धान्तों का विरोध करते हुए भट्टनायक ने रस की उत्पत्ति बतलाते हुए कहा है– *रसो न प्रतीयते। नोत्पद्यते। नाभिव्यज्यते। स्वगतत्वेन हि प्रतीतौ करुणे दुःखित्वं स्यात्। न च सा प्रतीतिर्युक्त। सीतादेरविभावत्वात् स्वकान्तास्मृत्यसंवेदनात्। देवतादौ साधारणीकरणयोग्यत्वात्..... ।*[गपप]

2.4 अभिनवगुप्त–रसाभिव्यक्तिवादः

रस सूत्र के चतुः सूत्रकारों अभिनवगुप्त चतुर्थ के रूप में उपस्थित होते हैं। उन्होंने सामाजिकों के हृदय में रस की अभिव्यक्ति को स्वीकार किया है। इनका मत है कि–लोक (काव्य नाट्य से भिन्न स्थल) में प्रमदा (उद्यान कटाक्ष) आदि (स्थायी) का अनुमान करने में निपुण सामाजिकों के हृदय में वासना रूप से स्थित रति आदि स्थायी भाव है, जो काव्य और नाट्य में उन्हीं के द्वारा अभिव्यक्त हो जाता है।

रस सूत्र के उपर्युक्त व्याख्याकारों में अभिनवगुप्त को सर्वश्रेष्ठ व्याख्याकार के रूप में स्वीकार किया गया है क्योंकि उनकी व्याख्या ही बाद के आचार्यों द्वारा स्वीकृत हुई है।

3. रस निष्पत्ति के सहायक तत्त्वः रस के उपपादक चार तत्त्व हैं–विभाव, अनुभाव, संचारी भाव या व्यभिचारी भाव तथा स्थायी भाव। भाव–वाचिक, आङ्गिक और सात्त्विक काव्यर्थों को भाषित कराने वाले तत्त्व को भाव कहते हैं।

भाव

विभाव	अनुभाव	स्थायीभाव	संचारीभाव
1. उद्दीपन 2. आलम्बन	1. आङ्गिक 2.वाचिक 3.आहार्य और	1.रति 2.हास 3.शोक	संचारीभाव के निर्वेद, ग्लानि आदि 33 भेद हैं निर्वेद, ग्लानि, शङ्का, श्रम, धृति जडता, हर्ष, दैन्य,

	4. सात्त्विक ↓ 1. स्तम्भ, 2. प्रलय (अचेतना), 3. रोमांच 4. स्वेद, 5.वैवर्ण्य(निष्प्रभता), 6.वेपथु(कम्पन्न), 7. अश्रु तथा 8. वैवर्य (स्वर में परिवर्तन)	4.क्रोध 5.उत्साह 6.भय 7.जुगुप्सा 8.विस्मय 9.शम (निर्वेद)	औग्रय,चिन्ता, त्रास, ईर्ष्या, अमर्ष, गर्व, स्मृति, मरण, मद, सुप, निद्रा, विबोध, व्रीडा, अपस्मार, मोह, सुमति, अलसता, वेग, तर्क, अवहित्था, व्याधि, उन्माद, विषाद, औत्सुक्य तथा चपलता।

4. रसों की संख्या एवं उनके स्थायी भावः

भरतमुनि ने अपने नाट्यशास्त्र में कण्ठतः आठ ही रसों का उल्लेख किया है, किन्तु परवर्ती आचार्यों ने शान्त रस को भी रस रूप में स्वीकार करके रसों की संख्या नौ स्वीकार की है।

रतिर्हासश्च शोकश्च क्रोधोत्साहौ भयं तथा।
जुगुप्सा–विस्मयश्चेत्थमष्टौ प्रोक्ताः शमोऽपि च।।

इन रसों का उल्लेख सारणी रूप में निम्न प्रकार से दर्शाया जा सकता है–

क्र.	रस	स्था.भा.	वर्ण	देवता	आलम्बन वि.	उद्दीपन विभाव	अनुभाव	सं.भा.
1.	श्रृंगार	रति	श्याम	विष्णु	नायक, नायिका आदि	चन्द्रमा, भ्रमर, उद्यान आदि	मुखावलोकन, चुम्बन, स्पर्श, आशंसा, विवर्तन,	आलस्य, जुगुप्सा के अतिरिक्त अन्य उत्कण्ठा, लज्जा आदि
2.	हास्य	हास	शुक्ल	प्रमथ	विकृत, आकृति, वाणी, वेष आदि	मुस्कराना, हँसना आदि चेष्टाएँ	नेत्रविलास, हँसी, मुख की प्रफुल्लता	निद्रा, आलस्य, चपलता, अवहिस्था

							आदि	आदि
3.	करुण	शोक	कपोत	यम	विनष्ट—बन्धु आदि शोचनीय वस्तु	दाह आदि कर्म	रोदन, विवर्णता, उच्छवास, निःश्वास, स्तम्भ, प्रलाप आदि	निर्वेद, मोह, अपस्मार, व्याधि, ग्लानि, स्मृति, श्रम, विषाद आदि
4	रौद्र	क्रोध	लाल	रूद्र	शत्रु आदि	शत्रु की चेष्टाएँ, शस्त्रादि धारण करना	उग्रता, आवेग, रोमांच, स्वेद, ओठ चबाना, ताल ठोगना आदि	आक्षेप करना, क्रूरता से देखना, अमर्ष, मोह, गर्व आदि
5.	वीर	उत्साह	सुवर्णवत्	महेन्द्र	जीतने योग्य शत्रु इत्यादि	शत्रु की चेष्टाएँ	युद्ध के धनुष, सैन्य अन्वेषण करना आदि	धैर्य, मति, गर्व, स्मृति, तर्क, उत्साह, रोमांच आदि
6.	भयानक	भय	कृष्ण	काल	भयोत्पादक, सिंहादि वस्तुएँ	भयोत्पादक	विवर्णता, मूर्च्छा, रोमांच, स्वेद, गद्दभाषण आदि	जुगुप्सा, आवेक, मोह, रेआस, ग्लानि, दीनता, शंका, मृत्यु आदि
7	वीभत्स	जुगुप्सा	नील	महाकाल	दुर्गन्धयुक्त मांस, रुधिर, चर्बी आदि	रक्त, मांस आदि में कीड़े—मकोड़े पड़ जाना	थूकना, मुख फेर लेना आदि, आँख मींचना, भौंह सिकोड़ना आदि	मोह, अपस्मार, आवेक, व्याधि, मरण आदि

8.	अद्भुत	विस्मय	पीत	गन्धर्व	अलौकिक वस्तुएँ	अलौकिक वस्तुएँ के गुणों का वर्णन	स्तम्भ, स्वेद, रोमांच, गग्द दस्वर, सम्भ्रम आदि	वितर्क, आवेग, भ्रान्ति, हर्ष आदि
9.	शान्त	शम (निर्वेद)	कुन्देन्दु शुक्ल	श्री नारायण	अनित्यत्वादि संसार की असारता का ज्ञान	पवित्र आश्रम, तीर्थ, रमणीय एकान्त वन	सभी प्राणियों तथा सभी वस्तुओं में समान दृष्टि	निर्वेद, हर्ष, स्मरण, मति, जीवदया आदि

5. अभिज्ञानशाकुन्तलम् में रसों का अनुप्रयोगः

परिभाषिक शब्द–

विभाव – **उद्दीपन विभाव** / **आलम्बन विभाव**

अनुभाव

सञ्चारीभाव

1. **शृङ्गार रसः** शृंग हि मन्मथोभ्देदस्तदागमन हेतुकः उत्तम प्रकृतिप्रायो रसः शृंगार इष्यते।।[गपपप]

उदाहरण

वाचं न मिश्रयति यद्यपि मद्वचोभिः कर्ण ददात्यभिमुखं मयि भाषणे।।
कामं न तिष्ठति मदाननसम्मुखीनां भूयिष्ठमन्यविषया न तु दृष्टिरस्याः।।

1.3.1 ||

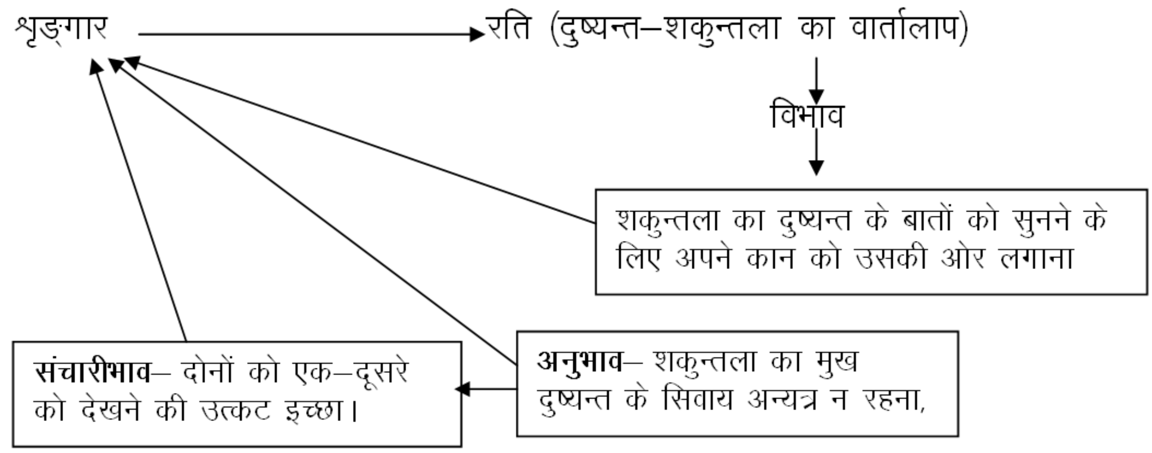

हास्य रस : विकृताकारवाग्वेष चेष्टादेः कुहकाभ्दवेत्। हास्योहासस्थायिभावः श्वेतः प्रमथदैवतः।।[गपअ]

उपदाहरणः *अभिमुखे मयि संहृतमीक्षणं, हसितमन्यनिमित्तकृतोदयम्।*

विनयवारितवृत्तिरतस्तया, न विवृतो मदनो न च संवृतः।।2.11

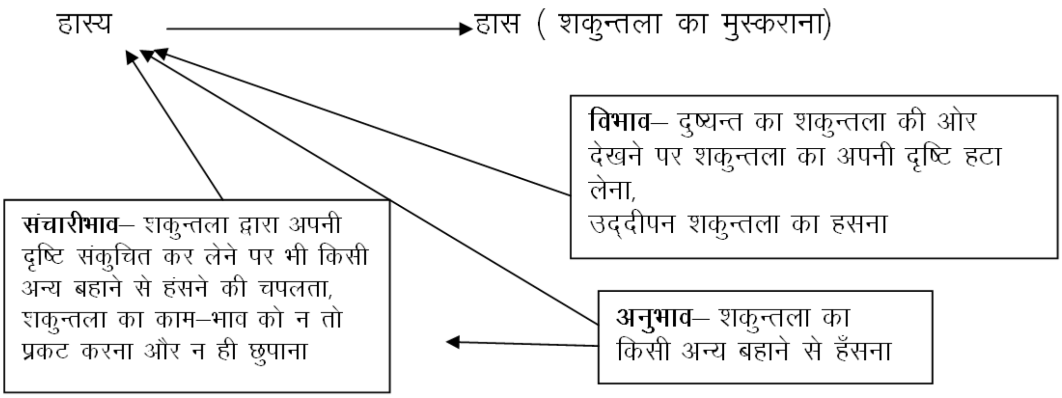

करुण रसः इष्टनाशादनिष्टाप्तेः करुणाख्यो रसो भवेत्।[गअ]

उदाहरण– *विचिन्तयन्ती यमनन्यमानसा तपोधनं न वेत्सि मामुपस्थितम्।*

स्मरिष्यति त्वां न स बोधितोऽपि सन्कथां प्रमत्तः प्रथमं कृतामिव।।[गअप]

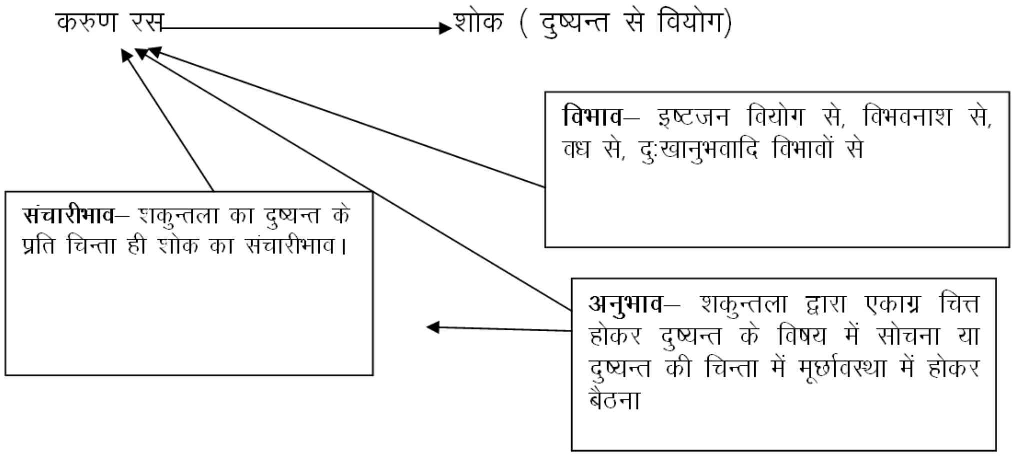

रौद्र रसः रौद्रः क्रोध स्थायिभावों रक्तो रुद्राधिदैवतः।[गअपप]

उदाहरण– *कः पौरवे वसुमतीं शासति शासितरि दुर्विनीतानाम्।*

अयमाचरत्यविनयं मुग्धासु तपस्विकन्यासु।[गअपपप]

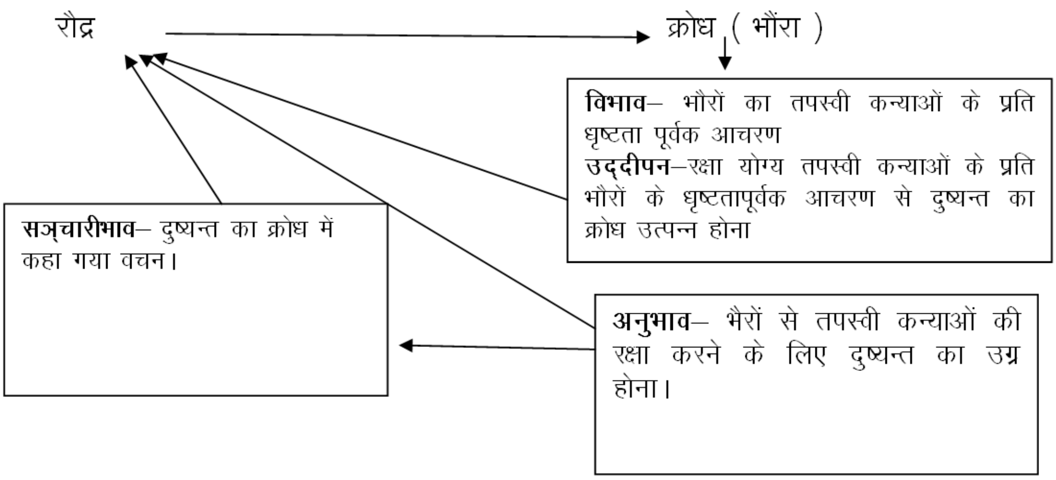

वीर रसः उत्त्मप्रकृतिर्वीर उत्साहस्थायि भावकः[गपग]

उदाहरणः

यदालोके सूक्ष्मं व्रजति सहसा तद्विपुलतां यदद्धा विच्छिन्नं भवति कृतसंधानमिव तत्।

प्रकृत्या यद्वकं तदपि समरेखं नयनयोर्न में दूरे किंचित्क्षणमपि न पार्श्वे रथजवात्।।[गग]

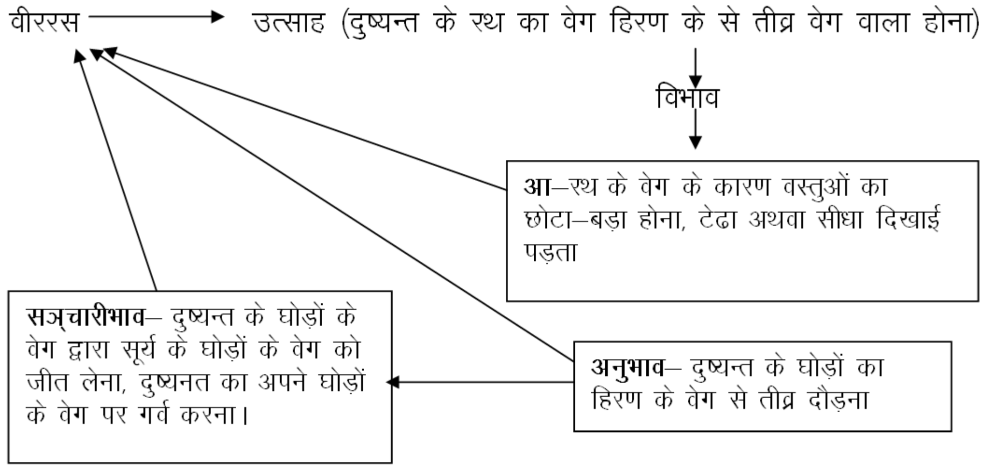

भयानक रसः भयानको भय स्थायि भावो भूताधिदैवतः।

स्त्रीनीच प्रकृतिः कृष्णोमतस्तत्त्वविशारदैः।।[गगप]

उदाहरणः

ग्रीवाभङ्गाभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने बद्धदृष्टिः

पश्चार्धेन प्रविष्टः शरपतनभयाद्भूयसा पूर्वकायम्।

दर्भैर्धावलीढ़ैः श्रमविवृतमुखभ्रंशिभिः कीर्णवर्तमा

पश्योदग्रप्लुतत्वाद्वियतिबहुतरं स्तोकमुर्व्यां प्रयाति।।[गगपप]

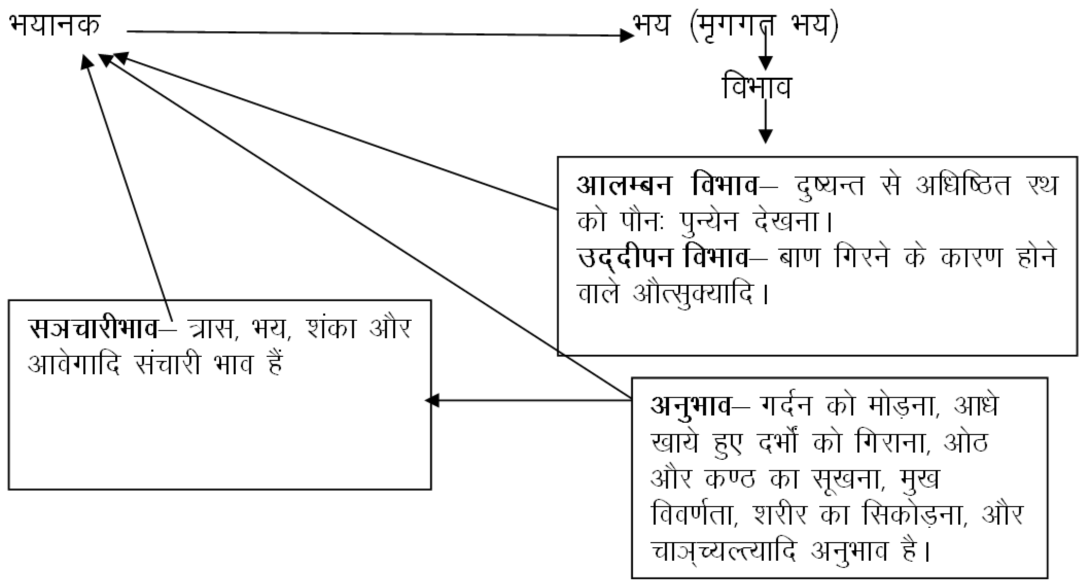

. बीभत्स रसः जुगुप्सा स्थायि, भाव, नील वर्ण तथा महाकाल देवता बाला बीभत्स रस होता है।[गगपपप]

उदाहरणः अनियतवेलं शूलयमांस भूयिष्ठ आहारो भुज्यते....... ।[गगपअ]

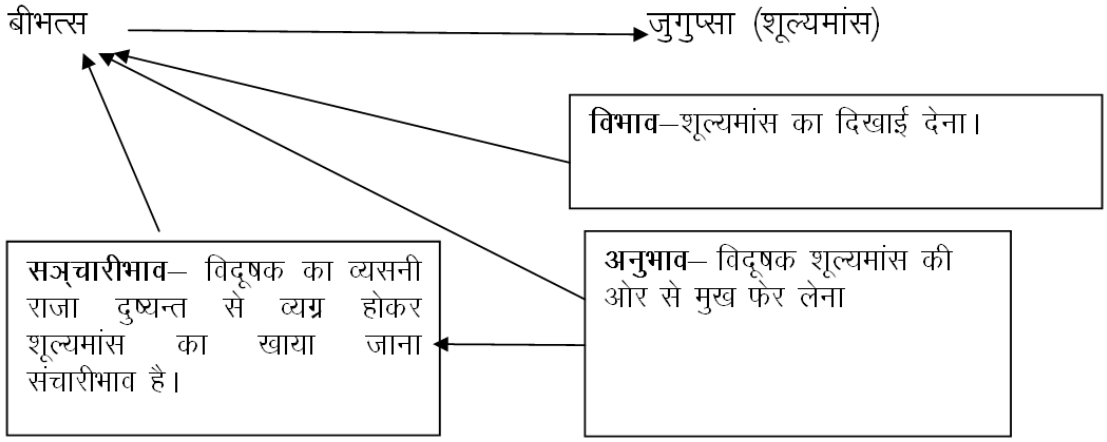

8. अद्भुत रसः यह विस्मय स्थायि भाव, पीत वर्ण तथा गन्धर्व देवता वाला होता है[गगअ]

उदाहरणः

शुद्धान्तदुर्लभमिदं वपुराश्रमवासिनो यदि जनस्य।

दूरीकृताः खलु गणैरुद्यानलता वनलताभिः।।1[गगअप]

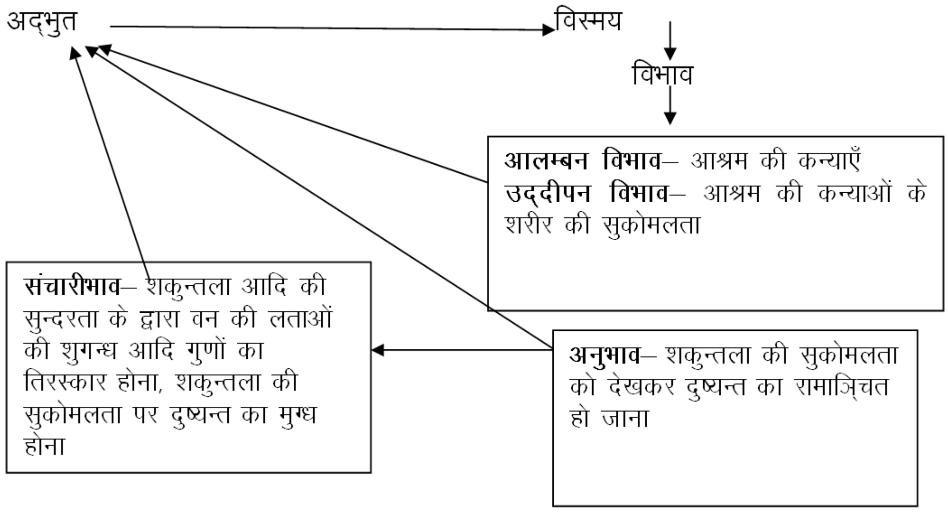

शान्त रसः शम स्थायि भाव वाला रस शान्त रस कहलाता है।[गगअपप]

उदाहरणः *शान्तमिदमाश्रमपदं स्फरति च बाहुः कुतः फलमिहास्य।*

अथवा भवितव्यानां द्वाराणि भवन्ति सर्वत्र।।[गगअपपप]

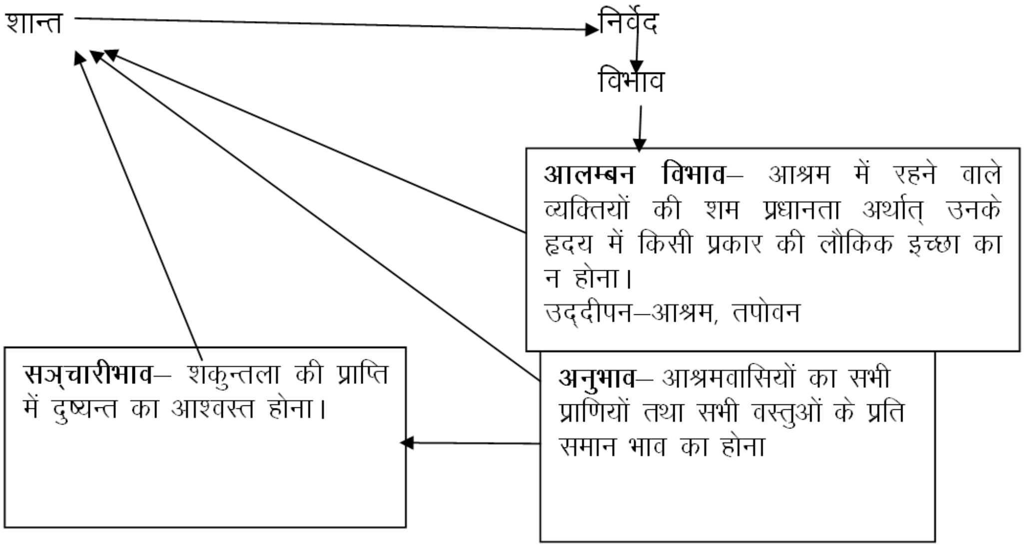

निष्कर्ष:

रस विमर्श के उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि साहित्य में रस की महत्ता सर्वोपरि है। शायद इसीलिए भरतमुनि, विश्वनाथ आदि आचार्यो ने काव्य में रस को ही सर्वोपरि माना है। आचार्य विश्वनाथ ने तो 'वाक्यं रसात्मकं काव्यं' कहकर रस को ही काव्य की आत्मा माना है जिसका दर्शन साहित्य के किसी भी विधा में किया जा सकता है, किन्तु नाट्य ग्रंथों में इसका विशेष महत्त्व है। महाकवि कालिदास विरचित अभिज्ञानशाकुन्तल एक नाटक ग्रंथ है। इस ग्रंथ में कवि ने रस की जो अभिव्यंजना की है, वह अत्यन्त ही श्लाघनीय है और सहृदयी पाठकों के हृदयों को आह्लादित करने में भी समर्थ है। अभिज्ञानशकुन्तलम् के समग्र अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि रस विवेचन ही ग्रंथ की आत्मा है। कालिदास ने उक्त ग्रंथ में रस का जो वर्णन प्रस्तुत किया है, वह वास्तव में सहृदयी पाठकों के हृदय को निश्चित रूप से आह्लादित और भाव–विभोर कर देता है। कवि के रस विषयक वर्णन वन के तपस्वियों को भी रूला देने में समर्थ है जिसका जीता–जागता उदाहरण महर्षि कण्व ही हैं जो तपस्वी होते हुए भी पुत्री के पतिगृह गमन के समय अपने अश्रु प्रवाह को नहीं रोक पाये। अतः रस विषयक उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि रस के बिना साहित्य प्राण–विहीन सा हो जाता है।

सन्दर्भ सूची

1. बृहदारण्यकोपनिषद् 3.2.1
2. तैत्तिरीययोपनिषद् 2.7
3. छन्दोग्योपनिषद् 1.1.2–3
4. उत्तररामचरितम्, 1.9
5. उत्तररामचरितम्, 2.5
6. उत्तररामचरितम्,3.47

7. साहित्यदर्पण, 3.1
8. नाट्यशास्त्र, 6.1
9. अभिनव रस सिद्धान्त, पृ0 9
10. वही,, पृ0 4
11. काव्यप्रकाश, पृ0 126 आर्चा विश्वेश्वर
12. अभिनव रस सिद्धान्त, पृ0 21–22
13. साहित्यदर्पण,3.183
14. वही, 3.214
15. वही,3.22
16. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 4.1
17. साहित्यदर्पण,3.227
18 अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1.25
19 साहित्यदर्पण 3.232
20 अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1.9
21. साहित्यदर्पण 3.235
22. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1.7
23 जुगुप्सास्थायिभावस्तु बीभतसः कथ्यते रसः।
नीलवर्णो महाकालदैवतोऽयमुदाहृतः।। सा0द0 3/239
24. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, द्वितीय सू0 1, पृ0 90 कपिलदेव द्विवेदी
25. अदभुतो विस्मयस्थायिभावो गन्धर्वदैवतः
पीतवर्णो वस्तु लोकातिगमालम्बनं मतम्।। सा0द0 3/242
26 अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1.17
27 शान्तःशमस्थायिभाव उत्तमप्रकृतिर्मतः।
कुन्देन्दुसुन्दरच्छायाः श्री नारायण दैवतः।। सा0द0 3/245
28 अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1.16

सन्दर्भ ग्रंथ–सूची

- अभिनव गुप्त, अभिनव रस–सिद्धान्त, द्विवेदी, दशरथ, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसीः 2000
- मम्मट, काव्यप्रकाश, व्या0 शास्त्री, श्रीनिवास, साहित्य भण्डार, मेरठः 1960
- चौधरी, सत्यदेव, रस–सिद्धान्त की प्रमुख समस्याएँ, अलंकार प्रकाशन, दिल्लीः 1951

- शुक्ल, रामचन्द्र, रस–मीमांसा, नागरी–प्रचारणी सभा, वाराणसीः संवत 2048
- श्रीधनंजय, दशरूपकम्, व्या0 शास्त्री, श्रीनिवास, साहित्य भण्डार प्रकाशन, मेरठः 2008
- वृहदारण्यकोपनिषद्, गीताप्रेस, गोरखपुरः 1968
- तैत्तिरीयोपनिषद्, गीताप्रेस, गोरखपुरः 1990
- छान्दोग्योपनिषद्, गीताप्रेस, गोरखपुरः 1990
- कालिदास, अभिज्ञानशाकुन्तलम्, व्या0 शिवद्यालङ्कार, निरूपण, साहित्य भण्डार, मेरठ, 2003
- भवभूति, उत्तररामचरितम्, व्या0 त्रिपाठी, रमाकान्त चौखम्बा, सुरीभारती प्रकाशन, वाराणसी : 2010